अपने आन्तरिक और बाह्य परिदृश्य को पुनर्नवीन करना

गुरुमाई चिद्विलासानन्द द्वारा सिखावनियाँ

विकास होना, ठहरना, ऊँचा उठना . . .

जैसे ही एक मानव-शिशु का जन्म होता है, उसका विकास आरम्भ हो जाता है। जैसे ही एक पशु-शिशु का जन्म होता है, उसका विकास शुरू हो जाता है। जैसे ही एक बीज के कठोर आवरण से अंकुर बाहर झाँकता है, वह केवल बढ़ना चाहता है, विकसित होना चाहता है और फलना-फूलना चाहता है।

जीवन ऐसा ही होना चाहिए।

है कि नहीं?

यह बात है, अपने आवरण को तोड़कर बाहर निकलने की—चाहे वह आवरण छोटा हो या बड़ा, मोटा हो या पतला, सरल हो या पेचीदा।

यह बात है, अज्ञान से मुक्त होकर प्रकाश की ओर अग्रसर होने की।

यह बात है, अपनी स्वार्थपरायणता का त्याग करने की और अपनी उपकारिता को साझा करने की—अपनी अच्छाई को, अपनी ईमानदारी को, अपनी नेकनीयती को, अपनी शिष्टता को साझा करने की।

तथापि, ऐसा देखा गया है कि एक प्राणी में, किसी भी तरह के विकास की प्रक्रिया लगातार होने वाली प्रक्रिया नहीं है। यह बात बस इस प्रक्रिया के होते रहने, होते रहने, *होते रहने* की नहीं है। इसमें ठहराव के क्षण भी आते हैं और कभी-कभी ये क्षण काफ़ी लम्बे होते हैं।

मनुष्यों और पशुओं में, शायद इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण है, नींद। विश्राम की ये नियमित अवधियाँ उनके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं ताकि वे अपने आपको पुनः संगठित कर सकें—

ताकि वे अपनी ऊर्जा की क्षतिपूर्ति कर सकें और उसे वापस बहाल कर सकें,
ताकि नए सिरे से जीवन जीने के लिए वे अपनी जीवनीशक्ति में नवप्राण भर सकें,
उसका कायाकल्प कर सकें और उसे पुनः प्रदीप्त कर सकें,
तथा प्रगति की अगली मंज़िल के लिए ख़ुद को तैयार कर सकें।

यही सिद्धान्त आध्यात्मिक लोक में ऊँचा उठने के लिए भी लागू होता है। तुम्हारी साधना की एक लय होती है, एक ताल होती है जो तुम्हारे लिए अनूठी होती है। तुम्हें इसे सुनना ही है और इस ताल के

साथ ताल मिलाकर चलना ही है। यदि तुम इसकी ताल से धीमे चलते हो तो अपनी प्रगति को अवरुद्ध करते हो। यदि तुम इसकी ताल से तेज़ चलते हो तो तुम्हारे लिए पूरी तरह थककर चूर हो जाने का ख़तरा है।

यह सिद्धार्थ गौतम की उस प्रचलित कहानी जैसा ही है जब वे महात्मा बुद्ध नहीं बने थे। सिद्धार्थ गौतम जब युवा साधक थे तब उन्होंने घोर शारीरिक तप किया, परन्तु उन्होंने देखा कि यह तपस्या उन्हें आत्मसाक्षात्कार के आस-पास भी नहीं ला सकी है। ऐसा क्यों है इस बात पर वे एक दिन मनन कर रहे थे कि तभी उन्हें एक दक्ष संगीतकार का स्वर सुनाई दिया जो अपने विद्यार्थियों को निर्देश दे रहे थे। वे संगीतकार अपने विद्यार्थियों को बता रहे थे कि उनके वाद्य के तार न तो अधिक कसे होने चाहिए और न ही अधिक ढीले। जब सिद्धार्थ गौतम ने ये शब्द सुने तो उनके अन्दर ज्ञान का उन्मेष हुआ। निर्वाण प्राप्त करने के उनके अपने प्रयासों के सन्दर्भ में, वाद्यों के सही सुर बिठाना उनके लिए एक उपमा बन गया।

आध्यात्मिक लोक में ऊँचा उठते जाने के लिए ज़रूरत होती है सूक्ष्म प्रयास की, तुम्हारे अन्दर क्या चल रहा है इससे अवगत होने की और आवश्यकतानुसार पुनः तालमेल बैठाने हेतु तत्पर होने की। इस दृष्टि से, यह उन अलग-अलग तरीक़ों के विकास से भिन्न है जिनका अनुभव एक प्राणी करता है। विकास स्वाभाविक रूप से हो सकता है। एक फूल खिलेगा ही। एक इल्ली यानी कैटरपिलर तितली बनेगी ही। मानव शरीर बढ़ेगा ही। ये क्रमिक बदलाव होंगे ही—इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि एक जीव उन बदलावों के प्रति कितना सचेत है या वह कितनी सक्रियता से उन बदलावों में भाग ले रहा है।

आध्यात्मिक रूप से ऊँचा उठने के लिए तुम्हें जानते-बूझते निर्णय लेना होगा।

तुम्हें अन्तर-यात्रा के मार्ग पर चलने का और *चलते रहने* का निर्णय लेना होगा।

इन्द्रियाँ बहिर्मुखी होती हैं, इसलिए लोगों का केन्द्रण भी बाहर की ओर हो जाता है। इस संसार में नाम कमाने का अर्थ क्या है, इससे वे परिचित हैं। सांसारिक सफलता की सीढ़ी कैसे चढ़ी जाए, यह वे जानते हैं। वहाँ पहुँचना चुनौतिपूर्ण हो सकता है—और निस्सन्देह, इसके लिए कठोर परिश्रम की ज़रूरत होगी—पर आगे जाने का रास्ता *है* और यह रास्ता स्पष्टगोचर है। इसे देखा जा सकता है, इसके बारे में सुना जा सकता है और निःसंकोच इसके बारे में बात की जा सकती है।

अन्तर की तीर्थयात्रा इससे कहीं अधिक रहस्यमयी है।

इसका आकार अगम्य है।

इसकी प्रकृति अवर्णनीय है।

बाह्य यात्रा की तरह इसका नक़्शा नहीं खींचा जा सकता और इसके पुरस्कारों को उन्हीं मानदण्डों से नहीं मापा जा सकता जिनसे बाहरी उपलब्धियों को मापा जाता है। अन्तर में उतरने का अर्थ खुद के लिए नाम कमाना नहीं है। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि तुम दूसरों के सामने यह जताओ कि तुम कितने महान, कितने प्रतिभासम्पन्न या कितने धनवान हो। इसका अर्थ वाह-वाही या तालियाँ बटोरना नहीं है। तुम अन्तर में इसलिए उतरते हो क्योंकि तुम अपने लिए ऐसा करने का निर्णय लेते हो। और फिर तुम अन्तर में उतरते जाते हो क्योंकि तुम्हें इस बात से प्रेरणा मिलती है कि तुम्हारी साधना किस प्रकार तुम्हारी सहायता कर रही है, किस प्रकार यह दूसरों को लाभान्वित कर रही है और किस प्रकार यह तुम्हारे परिवेश का उत्थान कर रही है।

प्राचीन भारत के ऋषि-मुनियों ने कहा है कि साधना करने का सही समय अभी है। एक के बाद एक, कितने ही शास्त्रों में उनके प्रज्ञान को भावी पीढ़ियों के लिए अंकित किया गया है।

वे कहते हैं *साधना का समय अभी है।*

अभी है,
अभी है,
अभी है।
तुम्हें विलम्ब नहीं करना चाहिए।

ऋषि-मुनियों को अपने अनुभव से यह ज्ञात था कि यदि सच में इस जीवन से कुछ महान प्राप्त करना हो तो व्यक्ति को अन्तर्मुखी होना ही होगा। असीमित करुणावश, उन्होंने साधकों को तत्काल कार्य करने के लिए प्रेरित किया; वे नहीं चाहते थे कि अन्तर-लोक के विस्मयों की खोज करने में कोई एक पल भी गँवाए। सहस्राब्दियों पश्चात्, आज भी उनके शब्द मार्गदर्शक प्रकाश हैं। यदि तुम समयातीतता की सुगन्ध को श्वास में भर लेना चाहते हो तो तुम्हारे पास जो समय है, तुम्हें उसका सदुपयोग करना ही होगा।

आख़िरकार, क्या यह सच नहीं है कि अन्तर्मुखी होने की जन्मजात ज़रूरत सभी में है? हम वास्तव में कौन हैं यह जानने की और फिर उस ज्ञान के साथ जीने की गहरी ललक सबमें होती है।

प्रश्न यह है : क्या हर कोई इस ज़रूरत का सम्मान करता है?

तुमने ऐसे लोगों के विषय में तो सुना ही होगा जो किसी बड़ी आपदा से व्यथित होने पर भगवान की ओर, एक महानतर शक्ति की ओर उन्मुख होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है, मानो केवल अपनी कठिनतम घड़ी में ही वे किसी ऐसी ताक़त की खोज करने लगते हैं जो उन्हें सम्बल दे सके। पर तब तक क्या बहुत देर नहीं हो चुकी होगी, कम से कम उनकी मौजूदा परिस्थिति के सन्दर्भ में? उस समय तक तो प्रहार हो चुका होगा। और तब तक उन्होंने अपनी संचित अन्तर-निधि में वृद्धि भी नहीं की होगी।

इसीलिए, मेरे प्रियजनो, मैं चाहती हूँ कि तुम 'अभी' शब्द को अपने जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शब्द समझो।

अभी,

अभी,

अभी।

तुम्हें प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए।

इस सिखावनी के आरम्भ में मैंने पूरी तरह थककर चूर हो जाने के बारे में बात की है और यह बात भी की है कि ऐसा तब होता है जब कोई व्यक्ति ठहरने की आवश्यकता को अनदेखा कर देता है। जीवन में, एक व्यक्ति थककर चूर तब होगा जब वह अपने अन्तर-जगत की देखभाल को पर्याप्त समय नहीं देगा—जब वह अपने अन्दर और अपने आस-पास अच्छी ऊर्जा के निर्माण को पर्याप्त समय नहीं देगा। यह ऊर्जा संरक्षण करती है। यह ऊर्जा वह बलक्षेत्र है जो उत्पन्न होने वाली किसी भी कठिनाई से बचने में उस व्यक्ति को सम्बल देगी।

इसी कारण से, सिद्धयोग पथ पर हम मन्त्र-जप करते हैं।

हम कल्याणकारी स्पन्दनों की रचना करते हैं।

मन्त्र एक ढाल है। मन्त्र एक कवच है।

नियमित अभ्यास द्वारा इस कवच को मज़बूत बनाना अनिवार्य है।

तुम मन्त्र गा सकते हो या मन्त्र-जप का अभ्यास कर सकते हो। तुम जो भी चुनो, उसे तब तक करते रहो जब तक तुम उस स्थान तक न पहुँच जाओ जहाँ ठहराव है—जब तक मन्त्र के पवित्र अक्षर प्रशान्ति में विलय न हो जाएँ।

‘योगवासिष्ठ’ में एक अद्भुत कहानी है जिसमें किशोरावस्था में श्रीराम वसिष्ठ मुनि से आग्रह करते हैं कि वे उन्हें भगवत्स्वरूप के बारे में समझाएँ। श्रीराम यह आग्रह करते हैं तो मुनि मौन बैठे रहते हैं। इसी तरह मौन में एक लम्बा समय निकल जाता है। अन्ततः, श्रीराम मुनि वसिष्ठ से पूछते हैं कि वे कुछ कह क्यों नहीं रहे। मुनि वसिष्ठ श्रीराम को समझाते हैं कि उनका मौन ही उनका उत्तर था। यह इसलिए क्योंकि भगवान निःशब्द हैं—वे अकथनीय हैं, पूर्ण प्रशान्त हैं, मौन का साकार रूप हैं।

तुम ठहरने के प्रति जितना सचेत रहोगे, उतना ही ऊँचा उठोगे।

तुम जितना ऊँचा उठोगे, ठहराव की तुम्हारी अनुभूतियाँ उतनी ही गहरी और समृद्ध होंगी।

मन्त्र के साथ-साथ, तुम अपने श्वास का सहारा भी ले सकते हो। तुम्हारे श्वास के अन्त में एक स्वाभाविक ठहराव होता है; तुम्हारे प्रश्वास के अन्त में एक और ठहराव होता है। इन ठहरावों में तुम उसी मौन को पा सकते हो जिसके बारे में वसिष्ठ मुनि बताते हैं। तुम भगवत्स्वरूप की अनुभूति कर सकते हो।

और जब तुम्हें यह अनुभूति हो तो उस अनुभूति के साथ रहो।

अब तक तुम इस बात को जान ही चुके हो, है न?

अपनी अनुभूति के साथ रहो। उसके साथ बने रहो।

यहाँ और अभी, जब तुम खुद को अपनी साधना के प्रति समर्पित करोगे तो पाओगे कि आध्यात्मिक लोक में ऊँचा उठने पर जो शक्ति तुम्हें प्राप्त होती है, वह किसी भी बाह्य प्राप्ति से कहीं अधिक स्थायी होती है। बाह्य प्राप्तियाँ शायद टिकें या न टिकें। मगर अपने अन्तर के आध्यात्मिक लोक के साथ तुम्हारा सम्बन्ध तुमसे कभी नहीं छिन सकता। अर्थात्, जो ज्ञान तुम वहाँ अर्जित करते हो, तुम्हारे गहन अनुभव तुमसे कभी नहीं छिन सकते। मृत्युशय्या पर लोग अपने बच्चों से और अपने नाती-नातियों व पोते-पोतियों से जो कहते हैं, उसकी कई हृदयस्पर्शी कहानियाँ मैंने पढ़ी हैं। कितनी ही बार ऐसा होता है कि अच्छा जीवन जीने का क्या अर्थ है, इस विषय में परिश्रम से अर्जित किए अपने प्रज्ञान को वे लोग अपने वंशजों के सुपुर्द करने में इस धरती पर अपने अन्तिम क्षण बिताते हैं। वे समझते हैं कि सब कुछ कहने-करने के बाद, अन्ततोगत्वा, यही वह चीज़ है जो उनके प्रियजनों के लिए सबसे अधिक मूल्यवान होगी।

इस संसार से गुज़रते हुए अन्तर-शक्ति तुम्हें दृढ़ सम्बल भी प्रदान करेगी। अन्यथा, बाहरी चीज़ों का, अन्तर में होने वाली चीज़ों पर आवश्यकता से अधिक शक्तिशाली प्रभाव पड़ेगा। यह केवल किसी बुरी ख़बर को ही झेलने से सम्बन्धित नहीं है। कभी-कभी लोग *अच्छी* ख़बर को भी झेल नहीं पाते। तुमने ऐसे क़िस्से सुने ही होंगे, है न? एक व्यक्ति अचानक मिलने वाले धन को, अचानक हुए भाग्योदय को सँभालने में इतना अक्षम होता है कि उसकी साँस ही उखड़ जाती है! वह *वस्तुतः* इस ग्रह से ही कूच कर जाता है!

तो तुम्हारे अन्दर जो चल रहा है, उस पर ध्यान दो। अन्तर-कार्य करने के लिए हर दिन प्रयत्न करो, और जितने विवेकपूर्ण ढंग से इसे कर सकते हो, करो। स्वयं को केन्द्रित करने के लिए, तुम मन ही मन या ज़ोर-से यह कह सकते हो :

"मेरी सत्ता में जो हो रहा है, उस पर मेरा नियन्त्रण है।

"मैं अपने दैनिक जीवन पर निगरानी रख रहा हूँ।

"मैं इस बात से हर्षित होता हूँ कि मेरा श्वास पुनः उदय होने और अपनी गतिविधि को जारी रखने के पूर्व किस तरह स्वाभाविक रूप से ठहरता है।

"मैं ऊँचा उठने के लिए सज्ज हूँ क्योंकि मैं अपने आन्तरिक और बाह्य परिदृश्य के प्रति सचेत हूँ।

"मैं ऊँचा उठने के लिए सज्ज हूँ क्योंकि मैं अपने ज़मीर के सम्पर्क में हूँ।

"मैं ऊँचा उठने के लिए सज्ज हूँ क्योंकि मैं इस ब्रह्माण्डीय चेतना के सौन्दर्य और रहस्य को जानने के लिए उत्सुक हूँ।"

~ गुरुमाई चिद्विलासानन्द

© २०२४ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

इस सिखावनी में सन्दर्भित कहानियों को पढ़ने के लिए, अंग्रेज़ी की सिखावनी के नीचे दिए गए लिंक पर क्लिक करें।